# मार्क्स- अम्बेडकर और हमारा समय

**भगवान स्वरूप कटियार**

bhagwanswaroopktr7@gmail.com

हम आज जिस दौर में जी रहे हैं वह विचारधारा के लिहाज से निहायत भ्रम और उलझाव का समय है। एक विचारहीनता और कार्पोरेट पूँजी की विकल्पहीनता का घटाटोप हमारे सामने है। इन हालात में जनपक्षधारिता और न्याय पर आधारित मनुष्य की सम्पूर्ण मुक्ति और उसके जनतांत्रिक अधिकारों के लिए कठोर संघर्ष से हजारों-सैकड़ों वर्षों में विकसित विचारधारा जिसको बुद्ध, सुकरात से लेकर कबीर, मार्क्स और अम्बेडकर तक या उससे आगे पेरियार, रामस्वरूप वर्मा, महाराज सिंह भारती तथा विनोद मिश्र और दीपान्कर भट्टाचार्य आदि ने बढ़ाया है। इस वैचारिक विकास और उसके अंतर्विरोधों से एक नयी सार्थक समझ की उर्जा लेते हुए हमें कार्पोरेट पूँजी के आतंक और उसकी कोख से जन्मे फासीवाद औरआतंकवाद से लड़ने के लिए नये हथियार, कला और संस्कृति के नये औजार गढ़ने होंगे। ऐसे विचारक जिन्होंने मनुष्य की मुक्ति और उसके अधिकारों के लिए संघर्ष में अपनी जिन्दगी आहुति कर दी हो उनकी वैचारिकी और उनके सम्पूर्ण सोच को हम उसी निष्पक्षता और ईमानदारी से समझने की कोशिश करें जिस ईमानदारी और निष्ठा से उन्होंने उसे एक बदलाव के धारदार हथियार के रूप में रचा-गढ़ा और उसी तरह से उसे वे अपनी जिन्दगी में जिये भी। कबीर भले ही अनीश्वरवादी न रहे हों पर धार्मिक कर्मकांड और पाखण्ड पर हिन्दू और मुसलमानों दोनों पर एक साथ बिना किसी लागलपेट और बेबाक ढंग से किये गये उनके हमले कबीर की प्रासंगिकता और उनकी दिलेरी को यादगार बनाती है। वे आज भी हमारे समय के नायक हैं। पर एक बात दिन के उजाले की तरह साफ है कि बगैर विचारधारा के न तो राजनीति का कोई आधार हो सकता है और न ही कोई सर्जनात्मक संस्कृति ही रची जा सकती है और बेहतर समाज का सपना देखना तो सम्भव ही नहीं है।

कबीर भले ही अनीश्वरवादी न रहे हों पर धार्मिक कर्मकांड और पाखण्ड पर हिन्दू और मुसलमानों दोनों पर एक साथ बिना किसी लागलपेट और बेबाक ढंग से किये गये उनके हमले कबीर की प्रासंगिकता और उनकी दिलेरी को यादगार बनाती है। वे आज भी हमारे समय के नायक हैं। पर एक बात दिन के उजाले की तरह साफ है कि बगैर विचारधारा के न तो राजनीति का कोई आधार हो सकता है और न ही कोई सर्जनात्मक संस्कृति ही रची जा सकती है और बेहतर समाज का सपना देखना तो सम्भव ही नहीं है।

इस विद्रूप दुनिया को बदलने और बेहतर दुनिया रचने का सपना तमाम विचारकों ने दुनिया के अलग-अलग देशों में अलग समय पर देखा और उसके लिए संघर्ष किया तब कहीं हम आज यहाँ जनतांत्रिक युग में पहुँचे हैं और आज भी उस लड़ाई को जारी रखे हुए इंकलाबी परचम हाथों में थामे हुए हैं। तमाम विचारक 2500 वर्षों से यह सपना देख रहे थे जिसमें सभी मनुष्य सामान होंगे और उनके बीच किसी प्रकार की गैर बराबरी नहीं होगी और न ही वर्गीय लूट- खसोट और शोषण होगा।

जरा सोचिए कार्ल मार्क्स जिस सर्वहारा की मुक्ति के लिए संघर्ष करते हुए वैज्ञानिक समाजवाद और द्वंद्वात्मक भौतिकवाद की विचारधारा का निर्धारण करते हैं आखिर वह सर्वहारा था कौन? यूरोप का इतिहास गवाह है कि वहां भारत की तरह किसान समाज नहीं था। वहां बड़े-बड़े जगीरदार थे जो हजारों-सैकड़ों एकड़ के मालिक होते थे और उनकी बेगार के लिए गुलाम होते थे। गुलाम भू मालिकों के लिए कृषि कर्म यानी खेती का काम करते थे और उन्हें भू-दास कहा जाता था। ये भू दास एशियाई गरीब दलित और पिछड़े वर्ग के गुलाम होते थे या फिर अश्वेत अफ्रीकी यानी नीग्रो काले हब्शी। इसी तरह भारत में भी दलित पिछड़ा और गरीब अल्पसंख्यक जिसकी लड़ाई अम्बेडकर लड़ रहे थे वो ही तो थे असली सर्वहारा। कार्ल मार्क्स और डा. अम्बेडकर इस मायने में अपने-अपने समय में एक जैसे मकसद ही लड़ाई लड़ने वाले नायक थे अपनी धारदार विचारधारा से लैस। कार्ल मार्क्स के आह्वान कि 'दुनिया के मजदूरो एक हो, तुम्हारे पास खोने के लिए कुछ नहीं है सिर्फ गुलामी की बेड़ियों के सिवाय जबकि पाने को पूरा संसार है, से डा. अम्बेडकर बहुत प्रभावित थे। पर भारतीय सन्दर्भ में डा. अम्बेडकर की बारीक परखी नजर वहां जाती है जहाँ तक डा. अम्बेडकर जैसा भारतीय चिन्तक ही पहुँच सकता है। उन्होंने कहा भारत के सवर्ण मजदूरों के पास खोने को जातिगत श्रेष्ठता भी है जिसे वह कभी नहीं खोना चाहेगा और भारत की मजदूर एकता कायम होने में यही सबसे बड़ा रोड़ा है। भारत के वामपन्थियों ने जाति को भारत